

ज्ञान के भेद, परिक्ष और प्रत्यक्ष का लक्षण

तास भेद दो हैं परोक्ष, परतछि तिन माही ।
मति श्रुत दोय परोक्ष, अक्ष मनतौ उपजाही ॥
अवधि ज्ञान मन पर्जय, दो हैं देश - प्रतच्छा ।
द्रव्य क्षेत्र परिमाण लिये, जाने जिय स्वच्छा ॥ २ ॥

अन्वयार्थ - (तास भेद दो है) उस सम्यग्ज्ञान के दो भेद है (परोक्ष प्रत्यक्ष) उनमें से एक परोक्ष और दुसरा प्रत्यक्ष (तिनमाहि) सम्यग्ज्ञान में (मतिश्रुति दोय परोक्ष) मतिज्ञान श्रुतज्ञान ये दोनों परोक्ष ज्ञान हैं। (अक्ष मन तौ उपजाहिं) इन्द्रिय और मन की सहायता से मतिज्ञान और श्रुतज्ञान पदार्थों को जानते हैं। (अवधि ज्ञान मन पर्जय) अवधि ज्ञान मन पर्यायज्ञान (दो हैं देश प्रतच्छा) यह दोनों एक देश प्रत्यक्ष है (द्रव्य क्षेत्र परिमाण लिये) द्रव्य क्षेत्र के परिमाण को लिए हुये (जिय स्वच्छा जाने) अवधि, मन पर्यय ज्ञानी जीव स्पष्ट रूप से जानता है।

.१२०.

भावार्थ - ज्ञान आत्मा का अभिन्न विशेष गुण है। इस ज्ञान गुण के पर्याय रूप से पांच भेद आगम में प्रतिपादित हैं। मति, श्रुत, अवधि, मनः पर्यय और केवलज्ञान। ये पांचों सम्यक् रूप से वस्तु स्वरूप को जानने मैं प्रमाण है इनमें प्रथम मतिज्ञान, श्रुतज्ञान परीक्ष प्रमाण है। ये इन्द्रिय तथा मन की साहाता से पदार्थों को जानते हैं अवधिज्ञान और मनःपर्यय ज्ञान एक देश प्रत्यक्ष ज्ञान है द्रव्यक्षेत्र काल भाव की मर्यादा को लिये हुए ये दोनों ज्ञान रूपी पदार्थ को स्पष्ट रूप से जानते हैं।

प्रश्न १. ज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्तर - किसी भी वस्तु के जानने को ज्ञान कहते हैं ।

प्रश्न २. ज्ञान के कितने भेद हैं ?

उत्तर - वास्तव में ज्ञान अखण्ड एक ही है परन्तु उसके प्रत्यक्ष, परोक्ष की अपेक्षा से दो भेद किये हैं एवं

सज्ञा और निमित्त की अपेक्षा से मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनः पर्यय ज्ञान और केवलज्ञान की अपेक्षा पांच भेद हैं ।

प्रश्न ३. परोक्ष ज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्तर - मन और इन्द्रिय की सहायता से जो ज्ञान पदार्थों को जाने उसे परोक्ष ज्ञान कहते हैं ।

.१२७.

प्रश्न ४. परोक्ष ज्ञान कौन- कौन से है ?

उत्तर - मतिज्ञान, श्रुतज्ञान परोक्ष ज्ञान है ।

प्रश्न ५. एक देश प्रत्यक्ष ज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्तर - द्रव्य , क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादा लिए हुए जो रूपी पदार्थ को स्पष्ट रूप से जानता है उसे एक देश प्रत्यक्ष ज्ञान कहते हैं ।

प्रश्न ६. सकल प्रत्यक्ष ज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्तर - रूपी, अरुपी सभी पदार्थों का परिपूर्ण जानना सकल प्रत्यक्ष ज्ञान है ।

प्रश्न ७. एक देश प्रत्यक्ष ज्ञान कौन-कौन से है ?

उत्तर - अवधि ज्ञान, मनः पर्यय ज्ञान एक देश प्रत्यक्ष ज्ञान है ।

प्रत्यक्ष ज्ञान की महिमा

सकल द्रव्य के गुण अनन्त, परजाय अनन्ता ।
जानै एकै काल, प्रगट केवलि भगवन्ता ॥
ज्ञान समान न आन, जगत में सुख को कारण ।
इहि परमामृत जन्म जरा मृतु-रोग निवारन ॥ ३ ॥

अन्वयार्थ - (सकल द्रव्य के गुन अनन्त) समस्त द्रव्यों के अनन्त गुण है (परजाय अनन्ता) अनन्त पर्याय है (एकै काल)एक समय में ही (प्रगट) स्पष्ट रूप से (केवल भगवन्ता जानै) केवली भगवान जानते है (ज्ञान समान न आन जगत में सुख को कारण) ज्ञान के समान अन्य कोई विश्व में सुख का कारण नहीं है । (इहि परमामृत) यह ज्ञान सर्व श्रेष्ठ अमृत है (जन्म जरा मृतु रोग निवारण) जन्म-जरा और मृत्यु रूपी रोगों को विनष्ट करने वाला है ।

.१२२.

भावार्थ - जीव पुद्गल धर्म अधर्म आकाश काल यह छहों द्रव्य परिपुर्ण रूप से व्याप्त है , इसलिए द्रव्यों के समूह हो ही लोक कहते है । सभी द्रव्यों के अनन्त गुण है और गुणों की अनन्तानन्त पर्याय है । छद्मस्थ ज्ञानी उन सभी द्रव्यों के अनन्त गुण और पर्यायों को पूर्ण रूप से जानने में सक्षम नहीं है । सर्वज्ञ वीतरागी हितोपदेशी केवलज्ञानी भगवान समस्त द्रव्यों के साथ-साथ उनके अनन्त गुण और पर्यायों को एक ही समय में स्पष्ट रूप से जानते है या यह भी कहा जा सकता है कि केवलो भूगवान के जानने देखने का विकल्प पुर्णतः समाप्त है । अतः उनका इन स्फटिक से भी निर्मल हो चुका है, इसलिए सारे विश्व के पदार्थ उनके ज्ञान में दर्पणवत् स्वयं प्रतिबिम्बित होते है, ज्ञान के विषय बनते है, ज्ञेय बनते है

अनादि काल से यह प्राणी सुख के साधन जुटाने में अहर्निश प्रयत्नशील है, परन्तु आज तक सच्चे सुख की अनुभूति करणे में विफल रहा है, क्योंकि आचार्यों ने सच्चे सुख का कारण इन बताया है और अभी तक प्रयत्न चलता रहा है । कि सुख की प्राप्ति विषय वासनाओं की पूर्ति

से संभंव है। यह निराधार भ्रम है। ज्ञान से बढ़कर विश्व में अन्य पदार्थ सुख का कारण नहीं है। यह ज्ञान परम अमृत स्वरूप है और यही जन्म, जरा, मृत्यु जैसे भूयांकर रोगों की परिसमाप्ति करने वाला है।

प्रश्न १. द्रव्य किसे कहते हैं ?

. १२३.

उत्तर - परिणमन शील गुण एवं पर्यायों की अभिन्नता को द्रव्य कहते हैं।

प्रश्न २. गुण किसे कहते हैं ?

उत्तर - अपनी अपनली विशेषताओं को लिये हुए जो द्रव्य में अभिन्न रूप से रहते हैं उन्हें गुण कहते हैं।

प्रश्न ३. पर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर - गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं।

प्रश्न ४. क्या द्रव्य गुण, पर्याय अलग अलग हैं ?

उत्तर - शुद्ध निश्चय नय से द्रव्य गुण पर्याय का विकल्प नहीं है मात्र अखण्ड सत् हे, परन्तु व्यवहार नय से अखण्ड द्रव्य में गुण पर्याय की विवेचना की जाती है।

प्रश्न ५. केवली भगवान तो वीतरागी है वह अनन्त द्रव्य गुण पर्यायों को कैसे जानते हैं ?

उत्तर - अनन्त द्रव्य गुण पर्यायों को जानने का विकल्प केवली भगवान के हे ही नहीं। जिस प्रकार दर्पण के समक्ष जों पदार्थ होते हैं वह स्वयमेव दर्पण में प्रतिबिम्बित होते हैं, उसी प्रकार केवली भगवान के ज्ञान दर्पण में चराचर समस्त पदार्थ स्वयमेव प्रतिबिम्बित होते हैं।

प्रश्न ६. क्या केवली भगवान का ज्ञान सारे लोक में व्याप्त है ?

उत्तर - लोक में जितने ज्ञेय है उन सबको जानने की अपेक्षा ज्ञाप्ति शक्ति से ज्ञेयों के बराबर ही केवली भगवान का ज्ञान है, इसलिये सभी पदार्थ केवली भगवान के ज्ञान का विषय सहज में बन जाते हैं।

.१२४.

प्रश्न ७. ज्ञान से बढ़कर अन्य कोई सुख का कारण क्यों नहीं ?

उत्तर - ज्ञान हेयोपादय पदार्थों को बताकर मोक्ष सुख को प्राप्त कराने वाला है, इसलिये सर्वश्रेष्ठ सुख का कारण ज्ञान है।

प्रश्न ८. ज्ञान के बिना जन्म, जरा, मृत्यु रोग नष्ट हो सकते हैं क्या ?

उत्तर - जन्म, जरा, मृत्यु आदि रोगों को मुलतः समाप्त करने के लिए सम्यग्ज्ञान ही औषधि है। बिना सम्यग्ज्ञान के चारित्र कार्यकारी नहीं है। अतः सम्यग्ज्ञान के चारित्र कार्यकारी नहीं है। अतः सम्यग्ज्ञान के अभाव में जीवन निरर्थक ही हो।

त्रिगुप्ति युक्त आत्म ज्ञान की महिमा

कोटि जन्म तप तपै, ज्ञान बिन कर्म झरें जे ।
ज्ञानी के छिन माहिं, त्रिगुप्तितै सहज टरै ते ॥
मुनिव्रत धार अनन्त बार, ग्रीवक उपजायो ।
पै निज आत्म ज्ञान बिना, सुख लेश न पायो ॥ ४ ॥

अन्वयार्थ - (कोटि जन्म तप तपै) करोड़ो जन्मों तक तपस्या करने पर भी (ज्ञान बिन कर्म झरें जें) ज्ञान के बिना जो कर्म झरते हैं (ज्ञानी के छिनमाहिं) ज्ञानी मुनिराज के क्षण मात्र में ही (त्रिगुप्ति तें) मन, वचन, काय तीनों की एकाग्रता से (सहज टरै ते) उतने कर्म आसानी से इर जाते हैं (मुनि व्रत धार) मुनिराज के पालन योग्य महाव्रतों को धारण करके (अनन्त बार ग्रीवक उपजायो) अनन्त बार सालह स्वर्ग से ऊपर नव ग्रैवेयकों में उत्पन्न हुआ (पै) फिर भी (निज आत्म ज्ञान बिना) शुद्धात्मा के ज्ञान बिना (लेश सुख न पायो) लेश मात्र भी सुख प्राप्त नहीं किया।

. १२५.

भावार्थ - ख्याती लाभ की चाह में डुबे हुये संसार में अगणित अज्ञानी आत्मा कायकलेश मात्र अज्ञान तपों की मोक्ष का कारण मानकर निरन्तर तपते चले जा रहे हैं, किन्तु वास्तविक तपों के अभाव में कर्मों की निर्जरा सम्यक् रूप से संभव नहीं है। करोड़ों जन्म तपस्या करने पर भी बिना सम्यग्ज्ञान के जितने कर्मों की निर्जरा होती है, उतने कर्मों की पिर्जरा सम्यग्ज्ञान के साथ तीन गुप्ति पूर्वक क्षण मात्र में होती है।

अज्ञान के साथ महाब्रतों को धारण और पालन करके अनेकों बार ग्रैवेयक तक की ऊचाइयों को प्राप्त कर लेने के उपरान्त भी निज शुद्धात्म ज्ञान के अभाव में सच्चे सुख की अनुभूति करने में विफल रहा। स्वर्ग और ग्रैवयकों के इन्द्रिय जन्य सुख सम्यग्ज्ञान के अभाव से सुखाभास ही है। ज्ञानी आत्मा स्वर्ग और ग्रैवेयक तोक्या सर्वार्थसिद्धि के सुखों से भी सन्तुष्ट नहीं है। शान्ति की लहर इन्द्रिय जन्य भागों में कहाँ ? ज्ञानी तो स्वात्मानुभूति का रसिक होता है।

प्रश्न १. ऐसे किसी मुनि का नाम बताइये जिसने करोड़ों जन्म तपस्या की हो ?

उत्तर - करोड़ों जन्म तपस्या करने वाले किसी मुनि का नाम आगम में नहीं है। अधिक से अधिक इकतीस बार मुनि बनके तपस्या की जा सकती है, बत्तीसवी बार नियम से मोक्ष जायेगा ही जायेगा।

प्रश्न २. करोड़ों जन्म तपस्या करने वाली बात झुठी है क्या ?

उत्तर - करोड़ों जन्म तपस्या करने वाली बात झुठी नहीं है। अभव्य मिथ्यादृष्टि अज्ञानी की अपेक्षा सम्यग्ज्ञान का महत्व दर्शाने के लिये ग्रन्थकार ने यह बात लिखी है।

. १२६.

प्रश्न ३. तपस्या मात्र से निर्जरा संभव है क्या ?

उत्तर - सम्यग्ज्ञान के अभाव में तपस्या मात्र से संवर पूर्वक निर्जरा नहीं होती, जो भी अकाम निर्जरा होती है वह कालान्तर में संसार वर्धक है।

प्रश्न ४. निर्जरा ज्ञानी के होती है क्या ?

उत्तर - मोक्षपुरी में पहुचाने वाली निर्जरा ज्ञानी मुनिराजों के ही होती है ।

प्रश्न ५. संवर पूर्वक निर्जरा मुनिराजों के ही क्यों होती है ?

उत्तर - ज्ञावक अवस्था में मन, वचन, काय तीनों योगों की एकाग्रता परिपूर्ण संभव नहीं है । मूनि दशा में महाव्रतों के साथ तीनों गुप्तियों की एकाग्रता से अन्तमुहूर्त में ही अनन्त जन्मों संचित कर्मों की निर्जरा हो जाती है ।

प्रश्न ६. आत्मज्ञान के अभाव में कौन-कौन मूनि ग्रैवेयक गये है ?

उत्तर - आत्मज्ञान के अभा ।व में मात्र तपउ से ग्रैवेयक गये हों ऐसे किन्हीं मुनिराज का नाम शास्त्रो में नहीं आया है ।

प्रश्न ७. मुनि पद अधिक से अधिक ३२ बार धारण किया जा सकता है, तो अनन्त बार ग्रैवेयक जाना कैसे संभव है ?

उत्तर - मुनिव्रत और मुनिपद में जमीन आसमान का अन्तर है । मुनिपद अर्थात् प्रत्याख्यान कषाय के अभाव में छठवां सातवां गुणस्थान आदि तथा मुनिव्रत मात्र महाव्रतों का पालन अर्थात् मुनिराजों के व्रत मात्र का पालन करने वाला ३२ से अधिक बार भी मुनी बनकर ग्रैवेयक जा सकता है मुलतः बात आत्म ज्ञान का महत्व बताने के लिए है ।

.१२७.

प्रश्न ८. आत्म ज्ञान के बिना सुख नहीं मिल सकता क्या ?

उत्तर - मुनिव्रत अंगीकार करने पर भी आत्मज्ञान के अभाव में निजान्द ।नउसंभव नहीं है । ऐसा आत्मा मात्र ख्याति लाभ या स्वर्ग सुखों को ही प्राप्त करके आनन्दित होता है ।

प्रश्न ९. ज्ञान के साथ त्रिगुप्ति को क्यों लिया है ?

उत्तर - कर्मों की निर्जरा अकेले ज्ञान से नहीं होती है । ज्ञान के साथ् में चारित्र की निर्मलता होने पर ही कर्मों की निर्जरा होती है । त्रिगुप्ति शब्द सम्यक् चारित्र का प्रतीक है ।

निर्दोष ज्ञान और मनुष्य पर्याय की दुर्बलता

तातौ जिनवर कथित तत्व, अभ्यास करीजै
संशय विभ्रम मोह त्याग, आपो लख लीजै ॥
यह मानुष पर्याय सुकुल, सुनिवो जिनवानी ।
इह विधि गये न मिलै सुमणि, ज्यों उदधि समानी ॥ ५ ॥

अन्वयार्थ - (तातौ जिनवर कथित) इसलिये जिनेन्द्र भगवान द्वारा प्रतिपादित (तत्व अभ्यास करीजै) जीवादि तत्वों का अभ्यास, मनन करना चाहीये (संशय विभ्रम मोह त्याग) सन्देह, विपर्यय, अनध्यवसाय को त्याग कर (आपो लख लीजे) अपने शुद्धात्म स्वरूप की पहचान करो (यह मानुष पर्याय) यह मनुष्य पर्याय (सुकुल) मोक्ष प्राप्ति में वाहय साधक उत्तम कुल (जिनवानी सुनिवों) और वीतराग प्रभु की सच्ची वाणी का श्रवण (इह विधि गये न मिलै) से तीनों यदि हाथूं से निकल गए तो फिर इनका मिलना इस प्रकार से दुर्लभ है (सुमणि ज्यों उदधि समानी) जैसे-अच्छा रत्न समुद्र में खो जाने के बाद पुनःमिलना दुर्लभ है ।

.१२८.

भावार्थ - एकान्तवादी आज्ञानी मिथ्या मान्यता वालों की वाणी का अनुसरण करके अनन्त भव भवान्तरों से चार गतियों की चौरासी लाख योनियों में अपना परिभ्रमण आज तक होता आ रहा है । अतः संसार सागर से पार होना है तो सर्वज्ञ, वीतरागी, हितोपदेशी जिनेन्द्र भगवान द्वारा प्रतिपादित जीवादि सात तत्वों को ज्ञेय, हेय, उपादेय, ध्येय रूप से अभ्यास करते हुये संशय, पिरय और अनध्यवसाय आदि विपरीत मान्यताओं को परिसमाप्ति कर निज शुद्धात्म स्वरूप की प्राप्ति में संलग्न हो जाओ ।

सभी पर्यायों में श्रेष्ठ मनुष्य पर्याय, उसमें भी श्रेष्ठतम मोक्षमार्ग के हेतु लोक प्रशंसनीय उत्तम कुल की प्राप्ति अत्यन्त कठिन है । उत्तम कुल से भी श्रेष्ठतर जिनेन्द्र भगवान की यथार्थ वाणी का सुनना दुःसाध्य है । जैसे- अत्यन्त परिश्रम के बाद समुद्र से प्राप्त किया हुआ रत्न पुनः समुद्र में विलय हो जाने के बाद मिमलना अत्यन्त कठिन है, ठीक उसी प्रकार मनुष्य पर्याय उत्तम कुल जिनवाणी का श्रवण छूट जाने के बाद पुनः प्राप्त हो जाना अत्यन्त कठिन है ।

प्रश्न १. जिनें द्वा भगवान द्वारा प्रतिपादित तत्त्वों के अभ्यास से क्या लाभ है ?

उत्तर - रागी द्वेषी जीवों द्वारा प्रतिपादित तत्त्वोपदेश, सच्चा उपदेश नहीं होता, वह तो कहीं भी अपनी कषाय की पुष्टि कर सकते हैं किन्तु, वीतरागी भगवान को किसी से राग-द्वेष नहीं है, इसलिये उनके द्वारा प्रतिपादित वस्तु स्वरूप ही अभ्यास योग्य सच्चे सुख का कारण है ।

प्रश्न २. संशय, विभ्रम, मोह से क्या हानि है ?

.१२९.

उत्तर - संशय, विभ्रम, मोह युक्त प्राणी को यथार्थ वस्तु स्वरूप समझ में नहीं आता और वस्तु स्वरूप को समझे बिना संसार दुःखों से पार होना संभव नहीं है ।

प्रश्न ३. संशय किसे कहते हैं ?

उत्तर - वस्तु स्वरूप में संन्देह करने को (यह ऐसा है या नहीं) संशय कहते हैं ।

प्रश्न ४. विभ्रम किसे कहते हैं ?

उत्तर - विपर्याय अर्थात् उल्टे ज्ञान को विभ्रम कहते हैं । जैसे इसीप को चांदी जानना ।

प्रश्न ५. मोह किसे कहते हैं ?

उत्तर - अनध्यवसाय अर्थात् राग, द्वेष एवं कषाय के वशीभूत होकर हिताहित, विवेक शून्यता और पर में एकत्व बुधि को मोह कहते हैं ।

प्रश्न ६. संशय, विभ्रम, मोह के सद्भाव में स्व संवेदना होता है क्या ?

उत्तर - संशय, विभ्रम, मोह के त्याग में इन्द्रिय जन्य विषयों का संवेदना ही स्व संवेदन वत् प्रतीत होता है, यद्यपि स्वसंवेदन, आत्मानुभूति विपर्यय ज्ञान के साथ में कदापि संभव नहीं है ।

प्रश्न ७. मनुष्य आदि सभी पर्यायें समान हैं क्या ?

उत्तर - सभी पर्यायों में मनुष्य पर्याय ही श्रेष्ठ है क्योंकि अन्य पर्याय से यथार्थ सुख की प्राप्ति नहीं होती ।

प्रश्न ८. उत्तम कुल प्राप्ति से क्या लाभ है ?

. १३०.

उत्तर - उत्तम कुल के बिना उत्तम गुणों का विकास संभव नहीं है । उत्तम कुल वहीं है जिसमें सदाचार, अणुव्रत, महाव्रत आदि के साथ मोक्ष मार्ग का अनुसरण किया जाय ।

प्रश्न ९. जिनवाणी श्रवण से क्या लाभ है ?

उत्तर - जिनवाणी सुने बिना हमें निज पर का ज्ञान संभव नहीं है, क्यों की हम छदमस्थ है । जिनेन्द्र भगवान ने लोक में अवस्थित सभी पदार्थों की जानकर मोक्ष मार्ग का जो उपदेश दिया है, उसे श्रवण किये बिना मोक्ष मार्ग पर चलाना संभव नहीं है । अतः जिनवाणी का श्रवण , मनन जीवन में अत्यन्त आवश्यक है ।

प्रश्न १०. इह विधि गये न मिलै सुमणि ऐसा क्यों कहा ?

उत्तर - मनुष्य पर्याय की दुर्लभता बताने के लिये यह दृष्टान्त दिया है जिस प्रकार रत्न समुद्र में गिर जाने पर पुनः सहज उपलब्धि संभव नहीं है , ठीक उसी प्रकार विषय वासनाओं में मानव पर्याय की परिसमाप्ति हो जाने के बाद पुनः सहज सुलभ नहीं है ।

सम्यग्ज्ञान की महिमा

धन समान गज बाज, राज तो काज न आवै ।
ज्ञान आपको रूप भये, फिर अचल रहावै ॥
तास ज्ञान को कारन, स्व पर विवेक बखानौ ।
कोटि उपाय बनाय, भव्य ताको उर आनौ ॥ ६ ॥

अन्वयार्थ - (धन समाज) सम्पत्ति और कुटुम्बी आदि (गज बाज) हाथी घोड़ा (राज)वैभव (तो काज न आवै) यह सभी मोक्ष मार्ग में काम आने वाले नहीं है

.१३१.

(ज्ञान आपको रूप भये) अगर आत्म स्वरूप सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति हो जय तो (फिर अचल रहावे) फिर (वह सम्यग्ज्ञान केवल ज्ञान प्राप्ति तक) स्थिर रूप से साथी है (तास ज्ञान को कारण) उस सम्यग्ज्ञान प्राप्ति का कारण (स्व पर विवेक विद्यानो) निज-पर विवेक भेद विज्ञान कहा गया है ।(कोटि उपाय बनाय) करोड़ो उपाय करके भी (भव्य ताको उर आनो) हे भव्य जीवो ! सम्यग्ज्ञान को हृदय में धारण करो ।

भावार्थ - भौतिकता की चकाचौंध में आज हर मानव धन कमाने को सर्वत्र दौड़ रहा है । देश -विदेश , दिन-रात- नीति-अनीति सभी को एक कर दिया है । पैसा आता देखकर सुख की एक सांस लेता है, परन्तु दुसरे ही क्षण तृष्णा भड़क उठती है और हजार पति को लखपति बनने की, लखपती को करोड़पति बनने को आकुलीत कर देती है । लाखों और करोड़ों की तो क्या अरबों की धन राशि भी मानव जीवन में शान्ति उत्पन्न कराने में सक्षम नहीं है । समय पड़ने पर पैसा, समाज, कुटुम्बी, नौकर, चाकर, हाथी , घोड़ा, राज्य , वैभव कुछभी काम आने वाला नहीं है । मुटटी बांधकर आने वाला हाथ पसारे चजा जाता है । सारे विश्व में कोई भी सच्चा संगा साथी नहीं है सिवाय सम्यग्ज्ञान के ।

सम्यग्ज्ञान साथ मे रहे तो जीवन भर शाश्वत अनन्त काल तक सच्ची सुख शान्ति की तरंगे उत्पन्न करता रहेगा । यह सम्यग्ज्ञान स्व-पर के विवेक से उत्पन्न होता है । हे भव्य आत्माओ । करोड़ों उपाय करके भी एक बार सम्यग्ज्ञान की उपलब्धि अपने आप में सम्यक् पुरुषार्थ के बल से अवश्य ही कर लो । सारा जीवन सदैव के लिये आनन्दित हो जायेगा । सफल हो जायेगा नर भव का पाना और निगोद राशि से त्रस पर्याय में आना ।

.१३२.

प्रश्न १. धन, समाज, परिजन आदि सच्चे साथी नहीं है क्या ?

उत्तर - लौकिक व्यवहार में धन एवं समाज का अपना महत्व है परन्तु आध्यात्मिक दृष्टि में धन समाज आदि का कोई महत्व नहीं । यह सभी स्वरूप प्राप्ति मे बाधक ही है ।

प्रश्न २. मानव जीवन में ज्ञान का महत्व क्यों है ?

उत्तर - सभी प्रकार की सम्पत्ति तो कुटुम्बी जन बॉट सकते हैं लुटेरे लूट सकते हैं, परन्तु ज्ञान एक ऐसी सम्पत्ति है जिसमें न कोई हिस्सेदार है, न चोर आदि का डर है ।

प्रश्न ३. ज्ञान के अभाव में क्या सुख शान्ति संभव है ?

उत्तर - लोकेषण में भले ही सब कुछ संभव है, परन्तु सम्यग्ज्ञान के अभाव में कभी भी सुख और शांति संभव नहीं है ।

प्रश्न ४. मोक्ष मार्ग में ज्ञान उपयोगी है क्या ?

उत्तर - सम्यग्ज्ञान निज-पर भेद विज्ञान बिना नहीं होता और निज-पर भेद विज्ञान के बिना मोक्ष मार्ग प्रशस्त नहीं होता । अतः मोक्ष मार्ग में सम्यग्ज्ञान का विशेष महत्व है ।

प्रश्न ५. सम्यग्ज्ञान का प्रमुख कार्य क्या है ?

उत्तर - सम्यग्ज्ञान का प्रमुख कार्य है स्व-पर भेद विज्ञान । जो वस्तु जैसी है उसे उसी प्रकार जानना ।

प्रश्न ६. सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति आवश्यक है क्या ?

उत्तर - अगर सच्ची सुख शांति प्राप्त करने की भावना है, तो सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति आवश्यक ही है । क्योंकि सम्यग्ज्ञान के अभाव में आत्म शांति एवं मोक्ष सुख की उपलब्धि संभव ही नहीं है ।

.१३३.

विषय चाह एवं सम्यग्ज्ञान का फल

जे पूरव शिव गये, जांहि अब आगे जे है ।
सो सब महिमा ज्ञान तनी, मुनिनाथ कहें है ॥

विषय चाह दवदाह, जगत जन अरनि दझावै ।

तास उपाय न आन, ज्ञान घन घान बुझवे ॥ ७ ॥

अन्वयार्थ - (जे पूरव शिव गये) जो भव्य जीव पूर्व काल मैं मोक्ष गये हैं (जांहि अरु आगे जै है) वर्त मान में जा रहे हैं और भविष्य काल में जो मोक्ष को प्राप्त करेंगे (सो सब महिमा ज्ञान तनी) वह सभू महिमा सम्यग्ज्ञान की है (मुनिनाथ कहे हैं) ऐसा गण्धर्ण और आचार्यों ने कहा है(विषय चाह दव दाह) विषय चाह रुपी दावानल अग्नि(जगत जन अरनि दझावै) संसार में मनुष्य रुपी जंगल को जलाति आ रही है (तास उपाय न आन) उस अग्नि को बुझाने का कोई दुसरा उपाय नहीं है(ज्ञान घन घान बुझवै) मात्र ज्ञान रुपी मेघ ही इस विषय रुपी अग्नि को शान्त करने में सक्षम है ।

भावार्थ - संसार के स्वरूप का भ ली भाँति परिज्ञान करने वाली अनन्त भव्यात्मायें संसार शरीर भोगों से विरक्त सम्यग्ज्ञान रुपी नौका पर आरुढ होकर संसार समुद्र से पार हो चुकी है और अगणित आत्मायें वर्तमान में द्रव्य कर्म, भाव कर्म, नो कर्मों से हमेशा के लिए विमुक्त होकर मोक्ष सुख से युक्त हो रहीं हैं तथा आगामी काल में जितने भी निजानन्द की अभिलाषी आत्मा मुक्तिबधु कसे अपनी सहचरी

.१३४.

बनायेंगे, वह सभी सम्यग्ज्ञान के बल से ही अपनें मनोरथों को पूर्ण कर पायेंगे, शाश्वत सुखानुभूति का आनन्द अपने जीवन में ले पायेंगे ।

संसार के दुःखों से छुटकर मोक्ष सुख की प्राप्ति कराने में सम्यग्ज्ञान का महत्व है, ऐसा पूर्वाचार्यों ने प्रतिपादित किया है । जब जगत में विचरण करने वाले मनुष्यों रुपी जूँगल में विषय कषाय रुपी अग्नि भडक उठती है, तब उसे शान्त करने के लिये विश्व में अन्य कोई उपाय नहीं है, मात्र सम्यग्ज्ञान रुपी घनघोर वृष्टि ही सहज में उस विषयाग्नि को शांत करने में सक्षम है ।

प्रश्न ९. क्या सम्यग्ज्ञान के अभाव में मोक्ष नहीं पा सकते ?

उत्तर - सम्यगज्ञान के अभाव में नतों किसी ने मोक्ष प्राप्त किया है, न कर रहा है और न भविष्य में करेगा ।

प्रश्न २. शास्त्रों में लिखा है कि अष्ट प्रवचन मात्र का स्वत्प ज्ञान होने पर भी मुनिराज मोक्ष जा सकते हैं ?

उत्तर - सम्यगज्ञान का मतलब शब्दात्मक श्रुतज्ञान से नहीं है, निज पर विवेक पुर्वक भेद विज्ञान से है । अष्ट प्रवचन मात्र का यह शब्द ज्ञान है, उनके आत्म ज्ञान में किसी प्रकार की कमी नहीं है ।

प्रश्न ३. विषय चाह रुपी अग्नि मनुष्य को कैसे जलाती है?

उत्तर - विषयों की तीव्र चाह ही चिन्ता की गहरी ज्वाला है । जब वह भड़क उठती है, तब जीवित मानव को भी जलाकर ध्वस्त कर देती है ।

प्रश्न ४. विषय रुपी अग्नि शान्त कैसे हो ?

.१३५.

उत्तर - जंगल में लगी हुई अग्नि को जैसे बरसता हुआ मेघ शांत कर देता है, उसी प्रकार मानव जीवन रुपी जंगल में लगी हुई विषयाग्नि को शान्त करने में सम्यगज्ञान रुपी मोघों की वृष्टि ही सक्षम है ।

प्रश्न ५. क्या अकेले सम्यगज्ञान से सच्चे मोक्ष सुख की प्राप्ति हो जायेगी ?

उत्तर - सम्यगज्ञान के साथ में सम्यगदर्शन और सम्यकचारित्र इन तीनों की एकता होने पर ही यथार्थ मोक्ष सुख की प्राप्ति होगी, परन्तु सम्यगज्ञान के अभाव में दर्शन और चारित्र सम्यक् नहीं होते इसलिए सम्यगज्ञान की महिमा कल्पनातीत है ।

पुण्य पाप में हर्ष विषाद का निषेध

पुण्य पाप फल मांहिं, हरख विलखौ मत भाई ।
 यह पुद्गल परजाय, उपजि विनसें थिर नाई ॥
 लाख बात की बात यहै, निश्चय उर लाओ ।
 तोरि सकल जग दन्द-फन्द, निज आतम ध्याओ ॥ ८ ॥

अन्वयार्थ - (पुण्य पाप फल मांहि) पुण्य पाप के फल के अन्दर (भाई) हे भव्यात्माओं (हरख विलखों मत) हर्ष एवं विषाद मत करो (यह पुद्गल परजाय) यह पुद्गल की पर्याय है (उपजि बनसें) उत्पन्न होकर नष्ट हो जाती है (थिर नाई) स्थिर नहीं है (लाख बात की बात यही निश्चय उर लाओ) लाख बात की यह एक बात अपने हृदय में दृढ़ता के साथ धारण करो (जग सकल दन्द-फन्द तोरी) जगत के समस्त दन्द फन्दों को तोड़कर (निज आतम ध्याओ) अपनी आत्मा का ध्यान करो ।

. १३६.

भावार्थ - अखिल विश्व में प्राणी मात्र के दोनों कर्मों का उदय देखा जा रहा-है पुण्य और पाप । अज्ञानी जीव पुण्य के उदय में खुशी, आनन्दित रहता है और पाप कर्म के उदय में दुखी, अप्रशन्न, अशान्त रहता है, परन्तु सच्चे सुख की प्राप्ति के इच्छुक भव्यात्माओं को आचार्यों ने संबोधित करते हुए कहा है कि हे भाई ! यह पुण्य पाप दोनों ही पुद्गल की पर्यायें हैं, जो उत्पन्न होकर नष्ट होती है स्थिर नहीं रहतीं । इसिलिये सारभूत लाख बात की एक ही बात आचार्यों ने कही है कि जगत के समस्त दन्द फन्दों को तोड़कर अपने शुद्धात्मा का ध्यान करो, अपने आप में समाहित हो जाओ । अपने ज्ञायक स्वभाव में समाहित होकर ज्ञानानन्द में निमग्न हो जाओ ।

प्रश्न १. पुण्य किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिसके कारण भौतिक सुखों की प्राप्ति हो एवं आत्मा पवित्र हो उसे पुण्य कहते हैं ।

प्रश्न २. पाप किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिसके कारण भौतिक सुख सामग्री की उपलब्धि न हो एवं जो आत्मा का पतन कराये उसे पाप कहते हैं।

प्रश्न ३. ज्ञानी की दृष्टि में पुण्य पाप का क्या महत्व है ?

उत्तर - भूमिकानुसार ज्ञानी प्रयत्न पूर्वक पुण्य कार्यों में अभिरुचि लेता है परन्तु उसके फल की इच्छा नहीं करता है और प्रयत्न पूर्वक पाप कार्यों से विरक्त रहता है परन्तु पाप कर्म के उदय में विचलित नहीं होता है अर्थात् पुण्य और पाप के फल में ज्ञानी को कदापि हर्ष विषाद नहीं होता है।

प्रश्न ४. पुण्य पाप आत्म स्वरूप है क्या ?

.१३७.

उत्तर - पुण्य पाप दोनों पुद्गल की पर्यायें हैं, आत्म स्वरूप नहीं।

प्रश्न ५. पुण्य पाप स्थाई रहते हैं क्या ?

उत्तर - पुण्य और पाप शाश्वत स्थायी नहीं रहतें, उदय में आकर समाप्त होजाते हैं और पुनः भी बन्ध हो जाता है।

प्रश्न ६. पुण्य पाप दोनों समान है क्या ?

उत्तर - पाप की अपेक्षा पुण्य महान है। सम्यग्दृष्टि का पुण्य परम्परा से मोक्ष का कारण भी है परन्तु आध्यात्मिक दृष्टि से दोनों समान है। पुण्य को सोने की तथा पाप को लोहे की बेड़ी कहा है।

प्रश्न ७. संसार में सार क्या है ?

उत्तर - संसार में रत्नत्रय रूप वीतराग धर्म ही सार है, इसके अतिरिक्त समस्त विषय कषाय एवं कुटुम्बी जन आदि कदली स्तम्भचत् असार ही है।

चरित्र के भेद और अणुव्रते

सम्यग्ज्ञानी होय, बहुरी दिढ़ चारित्र लीजै ।
 एक देश अरु सकल देश, तसु भेद कहीर्ज ॥
 त्रस हिंसा को त्याग, वृथा थावर न संहारे ।
 पर बध -कार कठोर, निन्द नहि वयन उचारे ॥१ ॥

अन्वयार्थ - (सम्यग्ज्ञानी होय बहुरी दिढ़ चारित्र लीजै) सम्यग्ज्ञानी होने के अनन्तर स्थिरता पूर्वक चारित्र को ग्रहण करना चाहिये (तसु) उस चारित्र के (एक देश अरु सकल देश) अणुव्रत और महाव्रत इस प्रकार (भेद कहीर्ज) दो भेद प्रतिपादित किये हैं (त्रस हिंसा को त्याग) त्रस जीवों की हिंसा का त्याग करके(वृथा थावर न संहारे) बिना प्रयोजन के किसी स्थावर जीव को भी कष्ट नहीं पहुंचाना (पर बधकार कठोर निन्द)दुसरों को नष्ट करने वाले, कानों को कठोर लगने वाले, लोक निन्दनीय(वयन नहि उचारे)वचन नहीं बोलना ।

. १३८.

भावार्थ - पच परावर्तन शील संसार में अनादिकाल से यह भोला प्राणी अज्ञान अंधाकार में भटकता आ रहा है । सम्यग्ज्ञान के अभाव में कोई भी आत्मा मोक्ष मार्ग का अवलोकन करने में सक्षम नहीं होता । इसलिए अनेकों यातनाओं के अनन्तर भी, जैसे भी, जाहौं भी, जिस समय भी ज्ञान की उपलब्धि हो, कर लेना चाहिए और सम्यग्ज्ञान के साथ ही अती चारों से रहित सम्यक् चरित्र को ग्रहण कर लेना चाहिए ।

सम्यग्ज्ञान के बाद अगर सम्यक् चरित्र जीवन में नहीं आता तो वह सम्यग्ज्ञान वास्तव में सम्यग्ज्ञान नहीं है, शब्द ज्ञान ही कहा जाता है सम्यग्ज्ञान उसी का नाम है जिसके साथ पद के योग्य चरित्र अर्थात् पर वस्तुओं के त्याग, कषायों के त्याग का अविनाभावी सम्बन्ध है ।

सम्यक्चरित्र के आचार्यों ने अणुव्रत, महाव्रत के भेद से दो भेद किये हैं । यहाँ पर अणुव्रतों की कुछ झलक इस प्रकार है । त्रस जीवों की हिंसा का त्याग करके, बिना प्रयोजन के किसी भी स्थावर जीव को कष्ट न पहुंचाना अहिंसा अणुव्रत है और किसी भी प्राणीके घातक कठोर, आगम तथा लोक के अनुसार निन्दनीय वचनों को न बोलना यह सत्य अणुव्रत है ।

. १३९.

प्रश्न १. सम्यगज्ञान के पहले सम्यकचारित्र नहीं हो सकता क्या ?

उत्तर - सम्यकचारित्र सम्यगज्ञान के साथ होता है पूर्व में नहीं ।

प्रश्न २. सम्यगज्ञान से पहले सम्यक् चारित्र नहीं हो सकता ?

उत्तर - सम्यगज्ञान के बिना हेयोपादेय का ज्ञान संभव नहीं है और हेयोपादेय के ज्ञान के बिना सम्यकचारित्र का जीवन में आना संभव नहीं है ।

प्रश्न ३. चारित्र किसे कहते हैं ?

उत्तर - हेय वस्तु के त्याग पूर्वक अपने आत्म स्वरूप में आचरण करने को सम्यक् चारित्र कहते हैं।

प्रश्न ४. सम्यक् चारित्र के भेद हैं क्या ?

उत्तर - स्वरूप की अपेक्षा सम्यकचारित्र एक ही प्रकार का है, परन्तु पात्रों की अपेक्षा अर्थात् श्रावक और मुनिराजों की अपेक्षा दो भेद किये हैं। परिणामों की अपेक्षा और भी अनेक भेद हैं।

प्रश्न ५. एक देश चारित्र किसे कहते हैं ?

उत्तर - आगमानुसार पांचों इन्द्रिय जन्य भोगोपभोगों का एवं पांचों पापों के सामान्य त्याग को एक देश चारित्र कहते हैं। इसका परिपालन श्रावक करते हैं। आध्यात्मिक दृष्टि से परिणामों में आंशिक वीतरागता ही एक देश चारित्र है।

प्रश्न ६. सकल चारित्र किसे कहते हैं ?

उत्तर - आगमानुसार पांचों इन्द्रियों के विषय और पांचों पापों का जिसमें परिपूर्ण त्याग होता है उसे सकल सम्यकचारित्र कहते हैं। इसका परिपालन संसार, शरीर, भागों से

विरक्त दिगम्बर मुनिराज ही कर पाते हैं। मुख्यतः आध्यात्मिक दृष्टि से अधिकांश रूपेण आत्म स्वरूप में तन्मयता ही सकल चारित्र है।

प्रश्न ७. अहिंसा किसे कहते हैं ?

उत्तर - त्रस जीवों का कष्ट नहीं पहुंचाते हुए बिना प्रयोजन के स्थावर प्राणियों को भी नहीं सताना यह अहिंसा अणुव्रत है।

प्रश्न ८. त्रस हिंसा किसे कहते हैं ?

उत्तर - दो इन्द्रिय से पंचेन्द्रिय पर्यन्त जीवों की कष्ट पहुंचाना त्रस हिंसा है।

प्रश्न ९. स्थावर हिंसा किसे कहते हैं ?

उत्तर - पृथ्वी जलादि एकेन्द्रिय जीवों को कष्ट पहुंचाना स्थावर हिंसा है।

प्रश्न १०. सत्य अणुव्रत किसे कहते हैं ?

उत्तर - प्राणियों से प्रा । ण घातक कठार और निन्दनीय वचन नहीं बोलना अर्थात् हितमित और प्रिय वचन बोलना, यह सत्य अणुव्रत कहलाता है।

प्रश्न ११. निन्द्य वचन किसे कहते हैं ?

उत्तर - विषय कषाय एवं छल कपट तथा वासना से युक्त संसार वर्धक वचनों को निन्द्य वचन कहते हैं।

शेष अणुव्रत और दिग्ब्रत

जल मृतिका बिन और, नाहिं कछु गहै अदत्ता ।

निज बनिता बिन सकल, नारि सों रहै विरता ॥

.१४१.

अपनी शक्ति विचार, परिग्रह थोरो राखै ।

दश दिश गमन प्रमाण ठान, तसु सीम न नाखै ॥ १० ॥

अन्वयार्थ - (जल मृतिका बिन) जल और मिटटी के बिना (और कछु अदत्त नाहिं गहै) और कोई भी पर वस्तु बिना दिये, बिना पुछे ग्रहण नहीं करते (निज बनिता बिन) स्व विवाहित धर्म पत्नी के सिवाय (सकल नारि सौ विरत्ता रहै) समस्त नारीयों से विरक्त रहते हैं । (अपनी शक्ति विचार) अपनी आवश्यकता के अनुसार (परिग्रह थोड़ो राखै) परिग्रह थोड़ा सा रख लेते हैं (दश दिश गमन प्रमाण ठान) दशों दिशाओं में आवागमन का प्रमाण करके (तसु सीम न नाखै) उस प्रमाण की सीमा का उल्लंघन नहीं करते ।

भावार्थ - श्रावक की भूमिक में अणुव्रतों के अपना एक विशेष महत्व है । अणुव्रतों के अभाव में श्रावक असंयमी नाम पाता है । सप्त व्यसन सहित अष्ट मूल गुण रहित असंयमी की वृत्ति को आचार्यों ने पशुवत् वृत्ति कह कर शिष्टाचार और मोक्ष मार्ग में उन्हें कोई स्थान प्रदान नहीं किया है । मुनिराज संसार शरीर भोगों से परिपूर्ण विरक्त है इसिलिजए महाव्रतों का परिपालन करनें में सक्षम है । श्रावक के मन में मोक्ष प्राप्ति की भावना जब लहरा उठती है और इन्द्रिय कषायों से पूर्ण विरक्त नहीं हो पाता तब वह अणुव्रतियों की श्रृंखला में जुड़ा रहता है । अहिंसा और सत्य अणुव्रत के साथ अचौर्य अणव्रत की विवेचना करते हुए आयार्चों ने आगम में बताया है कि जल और मिटटी के अतिरिक्त बिना दिये या बिना पूछे किसी भी प्रकार की वस्तुओं को ग्रहण नहीं करना यह अचौर्य अणव्रत है । स्वरूप आचरण की भावना के साथ अष्टमी

.१४२.

चतुर्दशी एवं विशेष पर्वों में स्व विवाहित धर्मपत्नी के अतिरिक्त समस्त नारियों से विमुख रहना या विरक्त रहतना यह ब्रह्मचर्य अणुव्रत है तथा अपनी आवश्यकता के अनुसार परिग्रह की सीमा बनाकर शेष परिग्रह का त्याग कर उससे दृष्टि मोड़ लेना परिग्रह परिमाण अणुव्रत है ।

अणुव्रतों में गुणित रूप से बृद्धि करने वाले ब्रत गुणव्रत कहे गये हैं, जिनके तीन भेद हैं । (१) दिग्व्रत (२) देशव्रत (३) अनर्थदण्ड त्यागव्रत । दशों दिशाओं के गमनागमन का प्रमाण करके उसकी सीमा का उल्लंघन नहीं करना यह प्रथम दिग्व्रत है ।

प्रश्न १. बिना पूछे जल और मिटटी ग्रहण करने पर चोरीं का दोष नहीं लगता क्या ?

उत्तर - सार्वजनिक नहीं कुआ या जंगल खेत आदि में से जल और मिटटी ग्रहण करने पर श्रावक को चारी का दोष नहीं लगता ।

प्रश्न २. किसी के मकान में जाकर बिना पूछे घड़े में से पानी भरना चारी नहीं है क्या ?

उत्तर - किसी के घर में जाकर बिन पूछे पानी और मिटटी ग्रहण करना चोरी है ।

प्रश्न ३. ब्रह्मचर्य अणुव्रत किसे कहते हैं ?

उत्तर - विशेषतः पर्वों में पूर्ण वासनाओं का त्याग करना और स्व विवाहित धर्म पत्नी के अतिरिक्त सभी से विरक्त रहते हुए उन्हें माता बहिन के समान समझना यह ब्रह्मचर्य अणुव्रत है ।

.१४३.

प्रश्न ४. परिग्रह परिमाण व्रत किसे कहते हैं ?

उत्तर - अपनी आवश्यकता से अधिक धन धान्यादि होने पर परिग्रह का त्याग करके सीमा बना लेना परिग्रह प्रमाण अणुव्रत है ।

प्रश्न ५. गुणव्रत किसे कहते हैं ?

उत्तर - पंचाणुव्रतों में वृद्धि करने वाले व्रतों को गुणव्रत कहते हैं । ये तीन होते हैं, दिग्व्रत, देशव्रत, अनर्थ दण्ड व्रत ।

प्रश्न ६. दिग्व्रत किसे कहते हैं ?

उत्तर - दशों दिशाओं की मर्यादा करके सीमा का उल्लंघन न करना दिग्व्रत है ।

देश व्रत और अनर्थदण्ड

ताहु में फिर ग्राम, गली गृह बाग बाजारा ।

गमानागमन प्रमान ठान, अन सकल निवारा ॥

काहू की धन हानि, किसी जय हार न चिंतै ।
देय न सो उपदेश, होय अघ वनज कृषी तै ॥ ११ ॥

अन्वयार्थ - (ताहू में) उस दिग्ब्रत में भी (फिर ग्राम गली गृह बाग बाजार) गांव, गली, घर, बाग, बाजार आदि में (गमनागमन प्रमान ठान) गमन और आगमन का प्रमाण करके (अन सकल निबारा)शेष अन्य सभी का परित्याग कर देना चाहिये (काहू की धन हानि) किसी के धन की हानि (किसी जय हान न चिंतै) किसी के हारने या जीतने का चिन्तवन न करें (बनज कृषी तैं) व्यापार और खेति आदि से अनेकों प्रकार के (अघ होय) पाप होते हैं (सौ) इसलिए खेती, बनिज आदि का (उपदेश न देय) उपदेश नहीं देना चाहिये ।

.१४४.

भावार्थ -अणुव्रती भव्य आत्माएँ अहिंसा, सत्य, अचौर्य, बम्हचर्य, परिग्रह परिमाण व्रत को सफल बनाने के लिये गुणव्रतों का पालन करते हैं इन व्रतों के परिपालन से घोड़े से भी अधिक छलांग लगाने वाले मन रुपी घोड़े को लगाम लग जाती है अर्थात् असीमित इच्छांये सिमामें बंध जाती है । अनावश्यक्य कार्या करणे की भावना आवश्यकता में निहीत हो जाती है । दिशा मर्यादाओं से उसके मन के विकल्प मर्यादित हो जाते हैं । दशों दिशाओं के अन्दर भी मैं असज अवपे गांव से बाहर नहीं जाऊँगा , बगीचे से बाहर नहीं निकलूँगा अमुक गली व बाजार से बाहर नहीं जाऊँगा, इस मंदिर में या एकान्त स्थान में बैठा रहूँगा ऐसी मर्यादा को देश व्रत कहते हैं । इससे मोनोवृत्ति इधर-उधर की भाग-दौड़ से बचकर अपने आप में समाहित हो जाती है । किसी की हार जीत का चिन्तवन, भूमि आदि का खोदना, असि, मसि, कृषि आदि का उपदेश, अप्रयोजनीय कार्यों का न करना अनर्थदण्ड से बचना है । इससे स्वाभाविक आत्म प्रयोजनीय कार्य प्रारम्भ हो जाते हैं ।

प्रश्न १. दिशाओं की मर्यादा करने से क्या लाभ है ?

उत्तर - दशों दिशाओं की मर्यादा करने से अमर्यादित क्षेत्र सम्बन्धी पापों से बच जाते हैं ।

प्रश्न २. देश व्रत से क्या लाभ है ?

उत्तर - देश ब्रत में दिशाओं की मर्यादा को भी संकुचित कर दिया जाता है, जिससे मन के विकल्प मर्यादा के अन्दर समाहित हो जाते हैं।

प्रश्न ३. अनर्थ दण्ड के त्याग से क्या लाभ है ?

उत्तर - अनर्थ दण्ड का त्याग करने से अहिंसा ब्रत पालन में वृद्धि होती है और अप्रयोजनीय कार्यों से विरक्ति होती है।

.१४५.

प्रश्न ४. किसी का धन समाप्त हो या हार हो ऐसा चिन्तवन करने से क्या हानि है ?

उत्तर - दूसरों की धन हानि या हार हो ऐसा चिन्तवन करने से उसकी हार या धन हानि हो या नाहो परन्तु अपने पाप कर्म का बंध निश्चित है।

प्रश्न ५. किसी की जीत चिन्तवन से क्या हानि है ?

उत्तर - किसी की जीत के भाव अपने मन में लाओगे तो किसी के हराने की भावना भी मन में निश्चित बनेगी और ये दोनों भवनायें राग-द्वेष के रूपान्तर हैं। अतः आत्मोत्थान में बाधक ही है।

अनर्थ दण्ड का भेद

कर प्रमाद जल भूमि, वृक्ष पावक न विराधै ।
असि धनु हल हिंसोपकरण, नहिं दे यश लाधै ॥
राग-द्वेष करतार, कथा कवहूं न सुनी जे ।
औरहु अनरथ दंड, हेतु अघ तिन्हें न कीजे ॥ १२ ॥

अन्वयार्थ - (कर प्रमाद) प्रमाद कर (भूमि जल पावक वृक्ष न विरोधे) पृथ्वी कायिक, जल कायिक, अग्नि कायिक और वनस्पति कायिक जीवों का घात नहीं करना चाहिये (असि धनु हल) तलवार, धनुष, हल आदि (हिंसोपकरण) जो हिंसा के उपकरण हैं (यश लाधें नहिं दे) यश की प्राप्ति के लिए किसी को नहीं देना चाहिये (राग - द्वेष करतार कथा) राग-द्वेष को उत्पन्न न करने

वाली कथा (कबहु न सुनी जे) कभी भी नहीं सुनना चाहिए (औरहु अनरथ दंड आपके हेतु) और भी अनेकों प्रकारके अनरथ दण्ड जो पापों के कारण है (तिन्हें न कीजे) उन की कभी नहीं करना चाहिये ।

. १४६.

भावार्थ - प्रमाद के वशीभूत होकर अप्रयोजनीय अनेकों कर्मों को बिना विचारे ही सहज भाव से अज्ञानी करता चला जा रहा है । कभी बैठा-बैठा लकड़ी तोड़ता रहता है, तो कभी लकड़ी ये जमीन खोदता रहता है, कभी -कभी चलता चलता फूल पत्ती को तोड़ता जाता है, तो कभी व्यर्थ में ही पानी की उछालता रहता है । क्या कर रहे हो ? पूँछने पर कुछ नहीं उत्तर के साथ सावधान होकर बैठ जाता है इससे लगता है कि प्रमाद अवस्था अज्ञानता की सहेली है, अनर्थों का द्वारा है, पापों की खानि है । ज्ञानी आत्माओं को प्रमाद से परिपूर्ण होने वाला अनरथ दण्ड कभी भी नहीं करना चाहिए ।

कभी ख्याति लाभ की भावना से बन्दुक, तलवार, हल, चाकू, छुरी आदि उपकरण दूसरों की देकर पप का भागी बन जाता है । कभी कभी राग, द्वेष को बढ़ाने वाली स्त्री आदि चार विकथाओं में रस लेकर पाप का बन्ध करता चला जाता है । इस प्रकार अनन्तो अप्रयोजनीय कार्य करता हुआ पापों का संचय करता रहता है । आचार्यों ने भव्य जीवों को संबोधन करते हुए कहा है कि अनरथ दण्ड पाप से सर्वथा विमुक्त रहना चाहिये, तभी अप्रमत्त दशा के माध्यम से अवरणीय अनन्त गुणों की उपलब्धि कर पायेंगे अपने आप में ।

प्रश्न १. प्रमाद किसे कहते हैं और वे कितने हैं ?

उत्तर - अच्छे कार्यों में अनादर का होना प्रमाद है । ४ विकथा, ४ कषाय, ५ इन्द्रिय, निद्रा और स्नेह इस प्रकार प्रमाद के १५ भेद हैं ।

. १४७.

प्रश्न २. अनरथ दण्ड किसे कहते हैं ?

उत्तर - अप्रयोजनीय पाप वर्धक कार्यों को अनरथ दण्ड कहते हैं ।

प्रश्न ३. प्रमाद से क्या हानि है ?

उत्तर - प्रमाद के साथ किसी भी जीव का घात होने पर हिंसा का दोष लगता है । अतः प्रमाद ही जीव को हिंसक या पापी बनाता है ।

प्रश्न ४. जल, भूमि आदि में भी जीव है क्या ?

उत्तर - पृथ्वी , जल, अग्नि, वायु और वनस्पति ये सभी एक इन्द्रिय जीव है, ऐसा आचार्यों ने कहा है ।

प्रश्न ५. भौतिक विज्ञान के अनुसार भी स्थावरों में जीव है क्या ?

उत्तर - वर्तमान में वैज्ञानिकों ने भी अनेकों प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध कर दिया है कि वनस्पति, जल आदि सभी स्थावरों में एक नहीं अगणित जीवों का अस्तित्व है ।

प्रश्न ६. अपने मित्र या पड़ोसियों को हिंसा के उपकरण देने में क्या दोष है ?

उत्तर - आपके पास से हिंसा के उपकरण ले जाकर आपके मित्र या पड़ोसी उनसे जो हिंसा करेंगे उस पाप का बहु भाग आपको भी मिलेगा । अतः हिंसा के उपकरण किसी को मांगने पर भी नहीं देना चाहिये ।

प्रश्न ७. विकथा क्यों नहीं सुनना चाहिये ?

उत्तर - विकथायें सुनने में या करने में समय व्यर्थ चला जाता है और राग-द्वेष की वृद्धि होती है, दुर्गति का बंध होता है इसलिए विकथाओं में समय नहीं गंवाना चाहिये ।

.१४८.

प्रश्न ८. पाप बंध किन-किन क्रियाओं से होता है ?

उत्तर - पर निन्दा, चुली किसी के पतन की भावना, किसी को धोखा देने की भावना, किसी के अशुभ कर्म को उदय में दुःखी देखकर प्रसन्न होना आदि अनेकों कुत्सित भावन । ओ से पाप कर्म का बंध हो जाता है ।

धरउर समता भाव, सदा सामायिक करिये ।
 परब चतुष्टय महिं, पाप तजि प्रोषध धरियें ॥
 भोग और उपभोग, नियम करि ममत निवारे ।
 मुनि को भोजन देय, फेर निज करहि अहारे ॥ १३ ॥

अन्वयार्थ - (धर उर समता भाव) अपने हृदय में समता भाव धारण करके (सदा सामायिक करिये) सदा सामायिक करना चाहिये (परब चतुष्टय माहिं) महिने के अन्दर आने वाली दोनों अष्टमी एवं दोनों चतुर्दशी के दिन (पाप ताज)पाप कार्यों का त्याग करके (प्रोषध धरिये) प्रोषधोपवास करना चाहिये(भोग और उपभोग) भोग और उपभोग की वस्तुओं की (नियम कर) मर्यादा बनाकर (ममत निवारे)शेष वस्तुओं से ममत्व छोड़ देना चाहिए (मुनि को भोजन देय) मुनिराज को आहार देकर(फेर निज करहिं अहारें) उसके बाद स्वयं आहार करना चाहिये ।

भावार्थ - मोह, ममता, राग-द्वेष की वृद्धि आदि दुर्भावनाओं में अनादि काल से समय व्यतीत होता जा रहा है । फलतः क्षण भर के लिये भी शान्ति की लहर नहीं मिल पा रही है । चारों गतियों में दर-दर की ठोकर चिरकाल से खाते चले आ रहे हैं । करुणानिधि हमारे पूज्य पाद आचार्यों ने आत्म शान्ति का उपाय चार शिक्षा व्रतों की

.१४९.

विवेचना करते हुये बताया है कि अपने हृदय में समता भाव को धारण करके सदैव अर्थात् त्रिकाल सामायिक करना चाहिये । आत्म स्वभाव में विलीन होने के लिये अष्टमी, चतुर्दशी पर्वों में सभा आरम्भ और परिग्रह रूप पाप कार्यों को छोड़कर प्रोषधोपवास करना चाहिये । भोगोपभोग की वस्तुओं की आवश्यकतानुसार सीमा बनाकर शेष सभी का विमोचन कर देना चाहिये और प्रातः देप पूजा के अनन्तर शुद्ध आहार बनाकर नवधा भक्ति पूर्वक मुनिराज को आहार कराकर तदनन्तर स्वयं आहार करना, यह चारों शिक्षा व्रत है इनसे निरन्तर मोक्ष मार्ग पर बढ़ने की शिक्षा प्राप्त होती है ।

प्रश्न १. शिक्षा व्रत किसे कहते हैं ?

उत्तर - अणुव्रत एवं गुणव्रतों के साथ जिनसे महाव्रत धारण करने की प्रेरणा जाग्रत हो उन्हें शिक्षाव्रत कहते हैं ।

प्रश्न २. शिक्षा व्रत कितने होते हैं ?

उत्तर - शिक्षाव्रत चार होते हैं इ

१. सामायिक, २. प्रोषधोपवास, ३. भोगोपभोग परिमाण, ४. अतिथि संविभाग ।

प्रश्न ३. सामायिक किसे कहते हैं ?

उत्तर - आधि, व्याधि, उपाधियों से परे होकर आत्म स्वरूप में लीन होने को सामायिक कहते हैं ।

प्रश्न ४. प्रोषधोपवास किसे कहते हैं ?

उत्तर - विषय कषाय एवं समस्त लौकिक कार्यों से विराम लेकर चारों प्रकार के आहार का संकल्प पूर्वक परित्याग करना प्रोषधोपवास कहलाता है ।

.१५०.

प्रश्न ५. प्रोषधोपवास कितने प्रकार का है ?

उत्तर - उत्तम, मध्यम, जघन्य के भेद से प्रोषधोपवास तीन प्रकार का है ।

प्रश्न ६. उत्कृष्ट प्रोषधोपवास किसे कहते हैं ?

उत्तर - अष्टमी और चतुर्दशी के दिन उपवास सप्तमी और नवमी एवं त्रयोदशी तथा पूर्णिमा के दिन एकासन करने को उत्कृष्ट प्रोषधोपवास कहते हैं ।

प्रश्न ७. मध्यम प्रोषधोपवास किसे कहते हैं ?

उत्तर - अष्टमी चतुर्दशी आदि पर्वों में निर्जला उपवास करने को मध्यम प्रोषधोपवास कहते हैं ।

प्रश्न ८. जघन्य प्रोषधोपवास किसे कहते हैं ?

उत्तर - पर्वों के दिनों में एकासना करने को या पूर्वापर तीनों दिनों में एकासन करने को जघन्य प्रोषधोपवास कहते हैं।

प्रश्न ९. भोगोपभोग परिमाण ब्रत किसे कहते हैं ?

उत्तर - भोग और उपभोग की वस्तुओं में आवश्यकतानुसार मर्यादा करके शेष वस्तुओं का परित्याग कर देना भोगोपभोग परिमाण ब्रत है।

प्रश्न १०. भोग किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो वस्तु एक बार प्रयोग में आती है उसे भोग कहते हैं जैसे-भोजन आदि।

प्रश्न ११. उपभोग किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो वस्तु पुनः पुनः उपभोग में आती है उसे उपभोग कहते हैं, जैसे- वस्त्रादि।

प्रश्न १२. अतिथि संविभाग शिक्षा ब्रत किसे कहते हैं ?

.१५१.

उत्तर - मुनिराज, ऐलक, क्षुल्लक, आर्यिका, त्यागी ब्रतियों का यथावत भक्त पूर्वक आहारादि देना यह अतिथी संविभाग शिक्षाब्रत है।

निरतिचार श्रावक ब्रत और समाधिमरण का फल

बारह ब्रत के अतिचार, पन-पन न लगावे।

मरण समय सन्यास धारि, तसु दोष नशावे ॥

यों श्रावक ब्रत पाल, स्वर्ग सोलम उपजावे।

तहँ तैं चय नर जन्म पाय, मुनि है शिव जावे ॥ १४ ॥

अन्वयार्थ - (बारह ब्रत के) बारह ब्रत के(पन पन अतिचार) पांच पांच अतिचार है, उन्हें (न नलगावे) नहीं लगाना चाहिए, अर्थात् अतिचारों से रहित ब्रतों का पालन करना चाहिए (मरण समय) मरण के समय (सन्यास धार) समाधि लेकर सभ्म प्रकार के आरम्भ परिग्रह का त्याग करके (तसु दोष नशावे) उस समाधि मरणे लगने वाले जीवप मरण क्षोभ आदि दोषों को समाप्त कर देता है (यों श्रावक ब्रत पाल) इस प्रकार श्रावक के ब्रत पालकर (स्वर्ग सोलम उपजावे) सोजहहवे स्वर्ग में उत्पन्न होता है (तँह तै चय) वहाँ से आकर(नर जन्म पाय) मनुष्य जन्म को प्राप्त करके (मुनि है) दिगम्बर मुनि बन कर (शिव जावे) मोक्ष सुख को प्राप्त कर लेते है ।

भावार्थ - अविरत अवरथा में अभक्ष्य का सेवन करने वाले बहुसंख्यक अज्ञानी प्राणी उसी में आनन्द मानते चले आ रहे है । कुछ भव्यात्मा अणुब्रतों का पालन तो करते है, परन्तु अतिचारों से नहीं बच पाते । हमारे पूर्वाचार्यों ने कहा है कि मोक्ष के प्रेमी अणुब्रति सभी भव्यात्मा इन बारह ब्रतों में लगने वाले पांच पांच अतिचारों से सर्वथा मुक्त रहे और समाधि मरण के समय सभी आरम्भ परिग्रह एवं जन्म-मरण आदि

.१५२.

की चिन्ताओं को छोड़कर निर्दोष समाधि करके सोजहहवे स्वर्ग में उत्पन्न हो २२ सागर पर्यन्त स्वर्गों के सुख भोगकर मानव पर्याय में आकर दिगम्बर मुनि बनकर भेद विज्ञान के बल से क्षपक श्रेणी मांडकर केवलज्ञान की प्राप्ति करते हुए मोक्ष सुख में विलीन हो जाते है ।

प्रश्न १. ब्रत किसे कहते है ?

उत्तर - १. विषय कषायों से विरक्ति ही ब्रत है, या इन्द्रिय लम्पटता के परित्याग को ब्रत कहते हैं।
२. संसार शरीर भोगों से विरक्ति एवं स्वरूप में अनुरक्ति को ब्रत कहते है ।
३. देव शास्त्र गुरु की साक्षी पूर्वक मोक्षमार्ग के अनुरूप ग्रहण किये हुए नियम को भी ब्रत कहते है ।

प्रश्न २. ब्रत कितने होते है ?

उत्तर - ब्रत बारह होते है ५ अणुब्रत ३. गुणब्रत ४. शिक्षाब्रत ।

प्रश्न ३. अतिचार किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो ब्रतों को मुलतः धात न कर सके परन्तु सदोष बना दे उसे अतिचार कहते हैं ।

प्रश्न ४. क्या ब्रत में अविचार लगाना चाहिए ?

उत्तर - ब्रतों में किञ्चित मात्र भी अचिर नहीं लगाने देना चाहिये । कदाचित प्रमादवश लग भी जाये तो गुरुसे प्रायश्चित लेकर निरतिचार ब्रतों का परिपालन करना चाहिये ।

.१५३.

प्रश्न ५. अतिचार कितने होते हैं ?

उत्तर - प्रत्येक ब्रत के पांच-पांच अतिचार होते हैं ।

प्रश्न ६. सन्यास किसे कहते हैं ?

उत्तर - संसार शरीर भोगों से विरक्त होकर रत्नत्रय पूर्वक समाधि मरण को तैयारी को सन्यास कहते हैं ।

प्रश्न ७. श्रावक किसे कहते हैं ?

उत्तर - श्रधावान, विवेकवान एवं क्रियावान सम्यग्दृष्टि भव्य आत्मा को श्रावक कहते हैं ।

प्रश्न ८. बारह ब्रतों का पालन करने वाला कहाँ तक जाता है ?

उत्तर - बारह ब्रतों का पालन करने वाला सोलहवे स्वर्ग तक जाता है ।

प्रश्न ९. बारह ब्रतों का पालन करने का फल सोलहवे स्वर्ग पर्यन्त ही है क्या ?

उत्तर - बारह ब्रतों का पालन करके सोलहवें स्वर्ग तक जाने वाला भव्यात्मा देव पर्याय के अनन्तर मनुष्य भव में दिगम्बर मुनि बन मोक्ष फल को भी प्राप्त करता है । अतः अणुब्रत परिपाल न का फल परम्परा से मोक्ष सुख की प्राप्ति भी है ।

प्रश्न १०. श्रावक अवस्था में भी समाधिमरण किया जा सकता है क्या ?

उत्तर - उत्कृष्ट रूप से समाधि परम दिग्म्बर मुनिराज ही करते हैं, परन्तु सामान्यतया मोह मिथ्यात्व का वमन करने वाला श्रावक भी साधना पूर्वक समाधिमरण कर सकता है।

.१५४.

चतुर्थ ढाल का सारांश

श्री पण्डित दौलतराम जी ने इस ढाल में सम्यग्दृष्टि जीव को सम्यग्ज्ञान का उपयोग चारित्र की दृढ़ता में लगाने की प्रेरणा देते हुए सम्यग्ज्ञान के भैद गरिमा आदि बताकर देश चारित्र रूप श्रावक धर्म का प्रतिपादन किया है। श्रावक को अपनी दिनचर्या सदैव समता सिहित निर्लोभ रूप से परिपूर्ण बारह ब्रतों का पालन करते हुये आदर्श जीवन बनाना चाहिये, ताकि मरणान्तिक दशा में निर्ग्रन्थ धर्म स्वीकार कर सम्यक् मोक्ष मार्ग बन सके। मोक्ष की जड मनुष्य पर्याय की सार्थकता सम्यग्दर्शन पूर्वक आत्म ज्ञान के साथ सम्यक् चारित्र ही है, जो एक देश श्रावक दशा में बारह ब्रताचारण रूप होता है तथा परिपूर्ण मुनिदशा में शुद्धोपयोग के साथ सकल संयम रूप होता है। देशब्रती श्रावक सोलहवे स्वर्ग तक जन्म पाता है और वहाँ से आयु क्षय कर पुनः मनुष्य पर्याय पाकर निर्ग्रन्थपना स्वीकार कर निर्वाण पाता है।

.१५५.

* पांचवी ढाल *

द्वादश भावन भायकर , भव्य गये भव पार ।

भाव भव्य बर्णन करुं, मिले मुक्ति का प्यार ॥

सौभाग्यशाली मुनिराज का कर्त्तव्य

मुनि सकलब्रती बड़भागी, भव - भोगनतै बैरागी ।

बैराग्य उपावन मार्झ, चिन्तै अनुप्रेक्षा भार्झ ॥ १ ॥

अन्वयार्थ - (मुनि सकल ब्रती बड़भागी) मुनिराज महाब्रती परम सौभाग्यशाली है (भव भोगनतै वैरागी) जो संसार के सभी भोगों से विरक्त रहते हैं (वैराग्य उपावन माई) वैराग्य (समता रूपी पूत्र) को उत्पन्न करने के लिए (माई) माता के समान है (भाई) हे भव्य प्राणियों (अनुप्रेक्षा चिन्तैं)(इस प्रकार की द्वादश) भावना का मुनिराज चिन्तवन करते हैं ।

भावार्थ - महाब्रतों की महिमा अखिल विश्व में हर प्राणी के मन में सर्वोच्च स्थान प्राप्त किये हुये हैं । महाब्रतों को अंगीकार करना सामान्य पुरुष के हाथ की बात नहीं है । महाब्रतों को धारण और पालन करने वाले सौभाग्य शाली महापुरुष ही होते हैं ।

जैसे- सिंहनी का दुध स्वर्ण पात्र में ही रुकते हैं, इसी प्रकार महाब्रतों को सौभाग्यशाली पुरुषार्थी महापुरुष ही धारण कर पाते हैं । महाब्रती मुनिराज संसार शरीर भोगों से राग-द्वेष, काम, क्रोध्, आदि कषायों से मोह, लोभ, क्षोभ आदि सभी कुविकारों से सर्वथा विरक्त रहते हैं तथा समता के साथ वैराग्य उत्पन्न करने वाली मातृत्व भाव में द्रवित बारह भावनाओं का निरन्तर चिन्तवन करते रहते हैं ।

.१५६.

प्रश्न १. मुनिराज कैसे होते हैं ?

उत्तर - मुनिराज संसार, शरीर एवं भोगों सं पूर्णतः विरक्त रहते हैं ।

प्रश्न २. मुनिराजों को सकल ब्रती क्यों कहा जाता है ?

उत्तर - हिंसादि पापों का सर्वथा त्याग होने से एवं संसार शरीर भागों से परिपूर्ण विरक्त होने से मुनिराज सकलब्रती कहे जाते हैं ।

प्रश्न ३. मुनिराजों कों बड़भागी क्यों कहा है ?

उत्तर - सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र रूपी रत्नों की प्राप्ति सामान्य लोगों को नहीं होती, निकट द्रव्य विशेष पुण्यशाली आत्माओं को ही होती है । अतः रत्नत्रय निधि के कारण मुनिराजों को विशेष भाग्यशाली कहा है ।

प्रश्न ४. अनुप्रक्षा किसे कहते हैं और वे कितनी हैं ?

उत्तर - संसार, शरीर, भोगों से विरक्त आत्म स्वरूप के पुनः पुनः चिन्तवन को अनुप्रेक्षा कहते हैं।

उनके द्वादश नाम निम्न प्रकार हैं इ

- (१) अनित्य (२) अशरण (३) संसार (४) एकत्व (५) अन्यत्व (६) अशुचि (७) आस्त्रव
- (८) संवर (९) निर्जरा (१०) लोक (११) बोधिदुर्लभ (१२) धर्म ।

द्वादश अनुप्रक्षाओं का फल

इनचिन्तत सम सुख जागे, जिमि ज्वलन पवन के लागे ।

जब ही जिय आत्म जाने, तब ही जिय शिव सुख ठाने ॥ २ ॥

.१५७.

अन्वयार्थ - (इन चिन्तत) इन द्वादश अनुप्रेक्षाओं के चिन्तवन से(सम सुख जागे) समता रूपी सुख जाग्रत हो जाता है (जिमि) जिस प्रकार (पवन के लागे ज्वलन) हवा के लगने से अग्नि भडक उठती है (जब ही जिय) जिस समय यह जीव(आत्म जाने) आत्मा को जानता है (तब ही जिय) उसी समय यह जीव (शिव सुख ठाने) मोक्ष सुख की प्राप्ति का स्थान प्राप्त कर लेता है ।

भावार्थ - बारह भावनाओं की महिमा कौन नहीं जागता । एक-एक भावना के चिन्तवन से अनादि काल से संसार दल-दल में फँसा हुआ आत्मा सहज में ऊपर की ओर उठता चला आता है । संसार की स्थिती मन पटल पर हेय रूप में अंकित हो जाती है । संवर, निर्जरा, बोधिदुर्लभ और धर्म भज्ञवनायें मोह क्षोभ को परास्त कर सच्चे समता सुख को जगाने में उस प्रकार निमित्त बन जाती है जिस प्रकार तीव्र हवा के चलने पर अग्नि भडक उठती है । जिस समय यह भव्य प्राणी अपने शुद्धात्म स्वरूप को जानता है, उसी समय यह मोक्ष सुख प्राप्ति के लिए कटिबद्ध हो जाता है । बारह भावनाओं के चिन्तवन से गुणदोषों की पहिचान क्षण - भर में हो जाती है । सारे के सारे दोसों को मुनिराज तिलाञ्जलि देकर सम्यगदर्शन, ज्ञान, चारित्र आदि गुणों में हमेशा के लिये लीन हो जाते हैं ।

प्रश्न १. भावना किसे कहते हैं ?

उत्तर - बार-बार संसार, शरीर अर्थात् भव समुद्र से पार होने का। चिन्तवन करने को भावना कहते हैं।

.१५८.

प्रश्न २. बारह भावनाओं का चिन्तवन से क्या लाभ है ?

उत्तर - बारह भावनाओं के चिन्तवन से समता सुख की उपलब्धि होती है, वेश्वाग्य में वृद्धि होती है और रत्नत्रय की उपलब्धि के साथ परम्परा से मोक्ष सुख की प्राप्ति होती है।

प्रश्न ३. बारह भावनाओं का चिन्तवन श्रावक नहीं कर सकते क्या ?

उत्तर - बारह भावनाओं का चिन्तवन श्रावक अवस्था में भी उपयोगी है, परन्तु उने चिन्तवन का पूर्ण फल मुनि अवस्था में ही प्राप्त होता है।

प्रश्न ४. सम सुख किसे कहते हैं ?

उत्तर - मोह एवं क्षोभ के अभाव में उत्पन्न आत्मीय आनन्द को समसुख कहते हैं।

प्रश्न ५. शिव सुख की प्राप्ति कब होगी ?

उत्तर - नय एवं प्रमाण से यथार्थ आत्म स्वरूप को जान लेने पर ही शिव सुख की प्राप्ति होगी।

अनित्य

जीवन गृह गोधन नारी, हृदय गय जन आज्ञाकारी ।

इन्द्रिय -भोग छिन थाई, सुर धनु चपला चपलाई ॥ ३ ॥

अन्वयार्थ - (जीवन गृह) जवानी एवं घर मकान(गोधन नारि) गाय, रुपया, पैसा तथा स्त्री (हृदय गय) घोड़ा हाथी (आज्ञाकारी जन) नौकर, चाकर एवं मित्र कुटुम्बीजन (इन्द्रिय भोग)

पांचों इन्द्रियों के विषय भोग (सुर धनु चपला चपलाई) इन्द्र धनुष एवं बिजली चपलता के समान(छिन थाई) क्षण मात्र स्थिर रहने वाले हैं।

. १५९.

भावार्थ - सांसारिक वस्तुओं में कृछ भी नित्य नहीं हैं। जो वस्तु अपनी प्रतीत होती है वही क्षण मात्र में पराई या विनाश को प्राप्त हो जाती है। दमकती हुई यौवन अवस्था, महल, मकान, हाथी, घोड़ा, गाय, भैंस, धन, वैभव, स्त्री आदि कुटुंबी जन, नौकर चाकर, मित्र जन और पांचों इन्द्रियों के भोग यह सभै इन्द्र धनुष या बिजली की चपलता के समान क्षण मात्र में विलय को प्राप्त हो जाने वाले हैं। मनुष्य अनित्यता में भी नित्यता खोजता है इसलिये शान्ति नहीं मिल पा रही है। भव्यात्माओं का कर्तव्य है कि संसार में अनित्यता का चिन्तवन कर शाश्वत रहने वाले निजात्म स्वरूप को प्राप्त करने का प्रयत्न करें।

प्रश्न १. अनित्य भावना किसे कहते हैं ?

उत्तर - संसार में कोई पदार्थ नित्य नहीं है, इस प्रकार के चिन्तवन को अनित्य भावना कहते हैं।

प्रश्न २. क्या संसार में कृछ भी नित्य नहीं है ?

उत्तर - स्त्री, पुत्र, मित्र, धन, यौवन आदि एवं इन्द्रियों के विषय भोग आदि कृछ भी नित्य नहीं हैं। देखते-देखते सभी विनष्ट हो जाते हैं, मात्र आत्म स्वरूप ही नित्य है।

प्रश्न ३. आत्मा नित्य कैसे है ?

उत्तर - आत्मा जन्म-मरण से रहित है और गुण पर्यायों से सहित है। शुद्ध द्रव्यार्थिक नय से, शाश्वत स्वभाव से आत्मा नित्य रहता है।

. १६०.

प्रश्न ४. क्या ज्ञानादि नित्य नहीं है ?

उत्तर - मतिज्ञान श्रुतज्ञान आदि प्रारम्भ के चार (ज्ञान) नित्य नहीं हैं, मात्र केवल ज्ञान नित्य है।

प्रश्न ५. धन सम्पत्ति कुटुंबी जनों को नित्य मानना भूल है क्या ?

उत्तर - धन, वैभव, कुटुम्बीजन सब इन्द्र धनुष के समान क्षण मात्र में विलय को प्राप्त हो जाने वाले हैं। अतः शरीर, धन, परिजन आदि को नित्य मानना भूल है।

प्रश्न ६. इन्द्रिय भोग नित्य है क्या ?

उत्तर - इन्द्रिय भोग नित्य नहीं है, इन्द्र धनुष के समान क्षण भंगुर दुःखद ही है।

अशरण

सुर असुर खगादिप जेते, मृग ज्यों हरि काल दलेते ।

मणि मंत्र तन्त्र बहु होई, मरते न बचावे कोई ॥ ४ ॥

अन्वयार्थ - (सुर असुर खगादपि जेते) इन्द्र, नरेन्द्र और खगेन्द्र आदि जो-जो है (ते) उन सबको(हरि ज्यों मृग) सिंह जिस प्रकार मृग को नष्ट कर देता है (काल दले) उसी प्रकार इन्द्र आदि को काल नष्ट कर देता है (मणि मन्त्र तन्त्र बहु होई) चिन्तामणि आदि मणि, रक्षा करने वाले मन्त्र टोटके वगैरह अनैकों प्रकार के हैं(परन्तु)(मरते कोई बचावे न) मरते समय जीव को कोई बचाने वाला नहीं है।

भावार्थ - जीवन में किसी न किसी की शरण हर प्राणी लेता है रोगी वैद्य की शरण लेता है, आपत्ति काल में मित्र और परिजनों की शरण लेता है, वचपन में माता

. १६१.

पिता की एवं जवानी में धन और विषय कषायों की शरण, बुढ़ापे में बहू-बेटे और लाठी की शरण परन्तु वास्तविकता यह है कि कोई किसी के लिये शरण नहीं है। आयु कर्म क्षीण होने पर बड़े-बड़े डाक्टर एवं विशेष औषधियों भी किसी को बचाने में सक्षम नहीं हो पातीं। मन्त्र, तन्त्र, ज्योतिष आदि सभी विद्यायें मरण समय विफल हो जाती हैं। अतः सिवाय सच्चे देव, शास्त्र, गुरु और अपने आत्म गुणों सिवाय के विश्व में कोई शरण नहीं है।

प्रश्न १. अशरण भावना किसे कहते हैं ?

उत्तर - संसार में वास्तव में कोई किसी के लिये शरण नहीं है इस प्रकार का चिन्तवन करना अशरण भावना है।

प्रश्न २. क्या मन्त्र, तन्त्र औषधि आदि संकट में सहायक नहीं हैं ?

उत्तर - पुण्य कर्म के उदय में मन्त्र, तन्त्र, औषधि आदि सभी सहायक बन सकते हैं, पाप कर्म के उदय में या आयु कर्म समाप्त होने पर यह सभी विफल हो जाते हैं।

प्रश्न ३. क्या इन्द्र आदि देवों को काल समाप्त कर देता है ?

उत्तर - जिस प्रकार सिंह, हिरण आदि जानवरों को नष्ट कर देता है, उसी प्रकार काल रुपी सिंह इन्द्र आदि सभी प्राणियों को आयु कर्म के क्षीण होने पर समाप्त कर देता है।

प्रश्न ४. मन्त्र किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिसके द्वारा मनचाहे कार्यों की सिध्दी की जाय या आत्मा का आदेश- निजानुभव जाना जाय अथवा परम पद में स्थित पंचपरमेष्ठियों का सत्कार किया जाय या महत्व पूणा रहस्यमय शब्दात्मक वाक्यों को मन्त्र कहते हैं।

.१६२.

प्रश्न ५. तन्त्र किसे कहते हैं ?

उत्तर - मन्त्र और यन्त्रों को भोज पत्र पर लिखकर शारीर आदि पर धारण करन या वृक्ष विशेष को विशेष समय में आमन्त्रण देकर तोड़कर लावे और फिर उसकी शुद्धि करके अनेकों इष्ट कार्यों की सफलता के लिये प्रयोग करना इसी को तन्त्र कहते हैं।

संसार

चहुँ गति दुःख जीव भरे हैं, परिवर्तन पंच करे हैं।

सब विधि संसार असारा, यामें सुख नांहि लगारा ॥ ५ ॥

अन्वयार्थ - (जीव चहृगति) यह जीव चारों गतियों में (दुःख भरे हैं) दुःख प्राप्त कर रहा है (और) (पंच परिवर्तन करे है) द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव भाव इस प्रकार पंच परावर्तन कर रहा है (सब विधि संसार असार) सभी प्रकार से संसार असार है (यामें) संसार में (लगारा) लेस मात्र भी (सुख नहिं) सुख नहीं है।

भावार्थ - मनुष्य तिर्यक्य देव और नरक इन चारों गतियों की चौरासी लाख योनियों में द्रव्य, क्षेत्र, काल भव, भाव इस प्रकार के पांचों परावर्तनों को करता हुआ प्रतिक्षण दुःख सागर में डूबा रहता है संसार में सर्वत्र दृष्टि उठा करके देखने पर कही भी सुख नजर नहीं आता। कोई शरीर से दुखी है, कोई पैसे के अभाव में, कोई पुत्र के अभाव में, कोई कुपुत्रों के सदभाव में, कोई पत्नी के वियोग में तडफ रहा है, तो कोई कुल्टा पत्नी के संयोग में पश्चाताप कर रहा है। कोई पाप कर्म के उदय से दर

. १६३.

दर भटक रहा है, कोई कषायों के कारण बैर विरोध रूपी ज्वा ला में जल रहा है। कोई छल कपट, ईर्ष्या, एक दुसरे की नीचा दिखने की भावना से बैचेन है तो कोई मिथ्यादर्शन ज्ञान चारित्र के कारण संसार सागर में गोता खा रहा है। अतः संसार सभी प्रकार से केले स्तम्भवत असार है ज्ञानी भव्य आत्म। ऐसे संसार स्वरूप को समझकर रत्नत्रय रूपी नौका में बैठकर मोक्षमार्ग की ओर अग्रसर हो जाते हैं।

प्रश्न १. संसार भावना किसे कहते हैं ?

उत्तर - पंच परावर्तन रूप भ्रमण एवं लोक में होने वाले जन्म-मरण आदि दुःख स्वरूप संसार का पुनः पुनः चिन्तवन करते हुए संसार समुद्र से तिरने की भावना संसार भावना है।

प्रश्न २. संसार में सर्वत्र दुःख ही दुःख है क्या ?

उत्तर - रत्नत्रय के अभाव से संसार में सर्वत्र दुःख ही दुःख है।

प्रश्न ३. क्या रत्नत्रय के साथ ही संसार में सुख है ?

उत्तर - रत्नत्रय से विभूषित आत्मा संसार में रहता है, परन्तु उसके अन्दर संसार नहीं है । वह जल में नाववत संसार में रहता है इसीलिये सुखी है ।

प्रश्न ४. परावर्तन किसे कहते हैं ?

उत्तर - जीव क्रम से द्रव्य, क्षेत्रादि रूप से जो चारों गतियों में परिणमन करता है अर्थात् जन्म-मरण करता है उसे ही परावर्तन कहते हैं ।

. १६४.

प्रश्न ५. परावर्तन कितने हैं ?

उत्तर - परावर्तन पांच हैं । द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भाव ।

प्रश्न ६. द्रव्य परावर्तन किसे कहते हैं ?

उत्तर - जी व द्वारा लोक व्याप्त सुम्पूर्ण पुद्गल परमाणुओं को क्रमशः ग्रहण करने को द्रव्य परिवर्तन कहते हैं ।

प्रश्न ७. क्षेत्र परावर्तन किसे कहते हैं ?

उत्तर - सुमेरु पर्वत के नीचे स्तनाकार आठ प्रदेशों को छोड़कर सम्पुर्ण आकाश के प्रदेशों पर क्रमशः अनन्त बार जन्म-मरण करने को क्षेत्र परावर्तन कहते हैं ।

प्रश्न ८. काल परावर्तन किसे कहते हैं ?

उत्तर - उत्सर्पिणी आसर्पिणी काल के प्रत्येक समय में क्रमशः जीव के जन्म मरण करने को काल परावर्तन कहते हैं ।

प्रश्न ९. भव परावर्तन किसे कहते हैं ?

उत्तर - जीव के द्वारा संसार की समस्त पर्यायों क्रमशः परिणमन करने को भव परावर्तन कहते हैं ।

प्रश्न १०. भाव परावर्तन किसे कहते हैं ?

उत्तर - जीव द्वारा मिथ्यात्म, पुण्य-पाप आदि रूप प्रत्येक विभाव परिणाम के परिणामन को भाव परावर्तन कहते हैं ।

. १६५.

एकत्व

शुभ अशुभ कर्म फल जेते भोगे जिय एकहि तेते ।
सुत दारा होय न सीरी, सब स्वारथ के है भीरी ॥ ६ ॥

अन्वयार्थ - (शुभ-अशुभ कर्म जेते फल) शुभ और अशुभ कर्मों के जितने फल है(तेते) वह सभी (एक ही जिय) अकेले जीव ही(भोगे)भोगता है(संसार में) (सब स्वारथ के भीरी है) सभी प्राणी मतलव के साथी है (सुत दारा सीरी होय न)पुत्र स्त्री पाप कर्म के उदय में या मतलव निकल जाने के बाद बात नहीं पूछते है ।

भावार्थ - संसार का हर प्राणी निरन्तर शुभ या अशुभ कर्मों का आस्त्रव -बन्ध , मन वचन काय की कुटिलता, मिथ्यात्म एव कषाय के कारण करता रहता है । शुभ और अशुभ रूप इन सभी प्रकार के कर्मों का फल जीव स्वयं भोगता है । पुण्य कर्म के उदय में, स्त्री, पुत्र (कुटुम्बी जन) और मित्र सभी प्यार करते है । पाप कर्म के उदय में सभी विमुख हो जाते है, द्वेष करने लगते है, कोई किसी का साथ नहीं देता । खोटे कर्मों का फल जिस समय जीव को भोगना पड़ता है उस समय कितने संक्रिटि परिणाम होते है, जिन्हें रोकने में कोई सक्षम नहीं है । मुलतः सारांश यह है कि यह जीव अकेला ही है, अपने कर्मों का फल अकेला ही भोगता है न कोई साथ आया है, न कोई आथ जायेगा । इस बात का अपने मन में सुदृढ़ निर्णय करके एकत्व विभक्त शुद्धात्म स्वरूप की प्राप्ति की भावना ही एकत्व भावना है ।

. १६६.